माननीय न्यायमूर्ति वी. एस. अग्रवाल, जे. के समक्ष

शिव दयाला,-याचिकाकर्ता

बनाम

श्रीमती सुलेचना देवी व एक *और-उत्तरदाता*

1999 की सी. आर. सं. 1463

12 अक्टूबर, 1999

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 भाग. 21, धारा *98 और 103- किराया नियंत्रक, प्रत्यर्थी संख्या 2 को, बेदखल करने का आदेश देता है-अपीलीय प्राधिकरण का अपील में रोक नहीं देना* -वादी *निष्पादन आवेदन दायर करता है-प्रत्यर्थी की पत्नी अपने स्वामित्व का दावा करती है और आपतियां दर्ज करती है-किराया नियंत्रक आपतियों को खारिज करता है-अपीलीय प्राधिकरण, पत्नी की अपील* की, *अनुमति देता है और मामले को किराया नियंत्रक को भेजता है-इसे चुनौती दी जाती है-प्रत्यर्थी निचली अदालत के समक्ष स्वीकार करता है कि वह, तीसरे व्यक्ति के किरायेदार, के रूप में व्यवसाय में था-पत्नी अपना अधिकार स्थापित करके प्रत्यर्थी के कब्जे की रक्षा नहीं कर सकती है-पत्नी द्वारा दायर की गई आपतियों को तुच्छ और खारिज करने योग्य माना जाता है।*

अभिनिर्धारित किया कि, इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि, यदि कोई तीसरा व्यक्ति अधिकार *में है,* जो प्रामाणिक रूप से अधिकार, स्वामित्व और हित का दावा करता है, तो दायर की गई आपतियों में उसी पर निर्णय लिया जा सकता है। यदि आपत्तियों *पर विचार* करने की आवश्यकता होती है, तो अनिवार्य रूप से एक परीक्षण आगे बढ़ेगा। यदि वे तुच्छ हैं और स्पष्ट रूप से *दुर्भावनापूर्ण हैं,* तो उन्हें खारिज कर दिया जाना चाहिए।

(पैरा 10)

इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया की, याचिकाकर्ता ने एक बेदखली याचिका दायर की थी जिसमें आरोप लगाया गया था कि वह मकान मालिक है और मामन राम किरायेदार है। मामन राम ने कुछ दलीलें स्वीकार कीं। उन्होंने किरायेदार और मकान मालिक के संबंधों से इनकार किया लेकिन इस दलील को स्वीकार किया कि वह किसी तीसरे व्यक्ति के किरायेदार हैं। विद्वत किराया नियंत्रक ने माना कि

पक्षकारों के बीच मकान मालिक और किरायेदार का संबंध है। इस प्रकार, इस मामले का निर्णय लिया गया था। इस प्रकार मामन राम के मामले से भी यह स्पष्ट था कि वह किरायेदार के रूप में व्यवसाय में था। उनकी पत्नी सुलोचना देवी अब संपत्ति में अपना अधिकार स्थापित करती हैं। आपत्तियों में यह नहीं दिखाया गया है कि मामन राम ने कभी सुलोचना देवी को अधिकार दिया था। इस प्रकार, सुलोचना देवी की जो भी उपाधि हो, जहाँ तक अधिकार का संबंध है, उसे मामन राम की उपाधि माना जाना चाहिए। इसलिए आपत्तियों पर आगे सुनवाई की आवश्यकता नहीं है और उन्हें तुच्छ माना जाना चाहिए। एक बार जब आपत्तियाँ तुच्छ हो जाती हैं, तो वे खारिज किए जाने के योग्य होती हैं।

(पैरा 11)

एस. के. मित्तल, *अधिवक्ता-याचिकाकर्ता की ओर से।*

ओ. पी. गोयल, वरिष्ठ अधिवक्ता, भुवन लूथरा, *अधिवक्ता-प्रतिवादीगण के लिए।*

निर्णय

वी. एस. अग्रवाल, जे.

(1) राम कुमार के पुत्र शिव दयाल ने, 4 फरवरी, 1999 के, विद्वत अतिरिक्त जिला न्यायाधीश/अपीलीय प्राधिकरण, नारनौल के फैसले के खिलाफ वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की है। विवादित फैसले के आधार पर, विद्वत न्यायालय ने 7 सितंबर, 1998 को विद्वत किराया नियंत्रक द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया था। यह निर्देश दिया गया था कि प्रतिवादीगण की आपत्तियों का निपटारा मुद्दों को तैयार करने और साक्ष्य दर्ज करने के बाद किया जाना चाहिए।

(2) प्रासंगिक तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता शिव दयाल ने प्रतिवादी संख्या 1 सुलोचना देवी के पति मामन राम के खिलाफ बेदखली याचिका दायर की थी। मकान मालिक की सहमति के बिना, किराए का भुगतान न करने, संपत्ति के मूल्य और उपयोगिता को प्रभावित करने के आधार पर, वाद परिसर के संबंध में, बेदखली की प्रार्थना की गई थी। प्रतिवादी मामन राम ने याचिकाकर्ता का विरोध *किया और* याचिकाकर्ता के बेदखली याचिका दायर करने के अधिकार को चुनौती दी। उन्होंने जोर देकर कहा कि याचिकाकर्ता विवादग्रस्त घर का मालिक नहीं था। बल्कि यह घर बसु देव और कमलापति का था। उसने राम प्रताप के बेटे कमलापति से घर किराए पर

लिया था और उसे अपनी पत्नी के नाम पर खरीदा था। विद्वत किराया नियंत्रक ने विवाद को मद्देनजर रखते हुए फैसला किया था और कहा था कि कमलापति को विवाद में संपत्ति बेचने का कोई अधिकार नहीं है और आगे यह कि बिक्री विलेख मामन राम द्वारा साबित नहीं किया गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि याचिकाकर्ता के अधीन मामन राम की मौखिक किरायेदारी थी। यहां तक कि किराया नियंत्रक ने भी कहा कि बेदखली याचिका में, प्रतिवादी मामन राम किराए का भुगतान न करने के आधार पर बेदखल होने के लिए उत्तरदायी था।

(3) ऐसा प्रतीत होता है कि मामन राम ने अपील भी दायर की है जो अपीलीय प्राधिकरण, नारनौल के समक्ष लंबित है।अपील में विद्वत किराया नियंत्रक द्वारा पारित आदेश पर रोक नहीं लगाई गई थी।

(4) याचिकाकर्ता ने फैसले का निष्पादन दायर किया। इसमें सुलोचना देवी प्रतिवादी नं. 1, मामन राम की पत्नी ने आपत्तियां दायर कीं। उन्होंने कहा कि वह घर की मालिक हैं और उन्होंने इसे खरीदा *हैं-7* जनवरी, 1994 के बिक्री विलेख के माध्यम से। बिक्री विलेख याचिकाकर्ता के नोटिस के भीतर है और उसने इसकी शुद्धता को चुनौती दी है। उन्होंने जोर देकर कहा कि यह संपत्ति कभी बाल बहादुर प्रसाद के स्वामित्व में थी। उनके चार बेटे थे। यह कमलापति के हिस्से मे आ गयी, जो बाल बहादुर प्रसाद के पोते थे। कमलापति ने यह संपत्ति मामन राम को किराए पर दे थी-एक *किराए* के नोट के माध्यम से। मामन राम की पत्नी सुलोचना देवी ने बाद मे उक्त संपत्ति खरीदी थी। वह विधिपूर्ण प्रतिफल *के लिए* प्रामाणिक खरीदार है और इसलिए, अपने अधिकार की रक्षा कर सकती है।

(5) याचिकाकर्ता शिव दयाल ने आपत्तियों को चुनौती दी थी। उन्होंने जोर देकर कहा कि आपत्ति करने वाली सुलोचना देवी का आपत्तियों से कोई लेना-देना नहीं है। बिक्री विलेख अवैध, अमान्य है। यह एक कागजी लेनदेन है। इस बात पर जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि सुलोचना देवी ने विद्वत सिविल न्यायाधीश, महेंद्रगढ़ की अदालत में घोषणा के लिए एक दीवानी मुकदमा दायर किया है। दीवानी मुकदमे के लंबित रहने के *दौरान, उन्होंने* याचिकाकर्ता को उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए एक विज्ञापन अंतरिम निषेधाज्ञा का अनुरोध किया। सिविल जज, महेंद्रगढ़ ने 14 नवंबर, 1998 को *निर्णय दिया* कि प्रतिवादी *सुलोचना देवी* के पास कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं है। विज्ञापन के अंतरिम निषेधाज्ञा को अस्वीकार कर दिया गया था।

(6) विद्वत किराया नियंत्रक ने आपत्तियों को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि प्रतिवादी सुलोचना देवी को बेदखली याचिका की जानकारी थी। उन्होंने फैसले के देनदार मामन राम के साथ मिलीभगत में आपत्तियां दायर की हैं। यह मानते हुए कि वे बिना योग्यता के थे, दावे को खारिज कर दिया गया था। उसी *से* नाराज सुलोचना देवी ने अपील को प्राथमिकता दी। विवादित निर्णय के दौरान, विद्वत अपीलीय प्राधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि श्रीमती. सुलोचना देवी एक तृतीय पक्ष है और उसे आपत्तियाँ दर्ज करने और अपने अधिकार की रक्षा करने का अधिकार है। यह निष्पादन न्यायालय का कर्तव्य था कि वह मुद्दों को तैयार करे और साक्ष्य दर्ज करने के बाद आपत्तियों का निपटारा करे। सटीक रूप से, मामला विद्वत किराया नियंत्रक को भेज दिया गया और अपील को स्वीकार कर लिया गया। उसी से आहत होकर, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की गई है।

(7) प्रतिवादीगण की ओर से एक प्रारंभिक आपत्ति उठाई गई थी कि अपीलीय प्राधिकरण में अपील विचारणीय नहीं थी। उन्होंने आग्रह किया कि अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष अपील केवल हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम, 1973 की धारा 15 (1) के तहत दायर की जा सकती है। यह उस अपील पर विचार नहीं करता है जिसके द्वारा आपत्तियों को खारिज किया जाता है। इसके विपरीत प्रतिवादीगण की ओर से उक्त अधिनियम की धारा 18 पर यह आग्रह करने के लिए भरोसा रखा गया था कि चूंकि बेदखली के आदेश को दीवानी अदालत के आदेश की तरह निष्पादित किया जाना है, इसलिए सुलोचना देवी अपनी आपत्तियों को खारिज करने पर सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुसार अपील दायर कर सकती हैं।

(8) अधिनियम की धारा 15 की उप-धारा (1), और धारा 18, निम्नानुसार हैः–

> 15 (1) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, एक सामान्य या विशेष आदेश द्वारा, ऐसे अधिकारियों और प्राधिकरणों को प्रदान कर सकती है, इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए, अपीलीय प्राधिकरणों की शक्तियां, ऐसे क्षेत्र में या ऐसे मामलों के वर्गों में जो आदेश में निर्दिष्ट की जाएं, उचित समझ सकते हैं।
>
> 18 आदेशों का निष्पादन।–इस अधिनियम के प्रावधान के तहत किए गए प्रत्येक आदेश को उस क्षेत्र में अधिकार क्षेत्र वाले दीवानी न्यायालय द्वारा निष्पादित किया जाएगा जैसे कि यह उस न्यायालय की डिक्री या आदेश हो।

स्पष्टीकरण।–जिस आदेश को निष्पादित करने की मांग की गई है, उसकी तारीख से पहले भवन या किराए पर ली गई भूमि का एक साल का किराया, अपील के मंच को निर्धारित करने के उद्देश्यों के लिए क्षेत्राधिकार मूल्य होगा।"

धारा 15 की उप-धारा (1) के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, 11 अगस्त, 1984 की अधिसूचना जारी की गई थी और उसी में लिखा हैः–

"8. जिला न्यायाधीश और अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को, अधिनियम की धारा 4,10,12 और 13 के तहत, आदेश के खिलाफ अपील सुनने के लिए 1973 के हरियाणा शहरी किराया अधिनियम संख्या 11 की धारा 15 (1) के तहत अपीलीय अधिकारियों की नियुक्ति की। ऐक्ट न. एस. ओ. 119/एच. ए./73/एस. 15/84 (दिनांक 11 अगस्त, 1984)

हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम, 1973 की धारा 15 की उप-धारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए और इस संबंध में जारी की गई सभी पिछली अधिसूचनाओं के स्थान पर, हरियाणा के राज्यपाल एतद्द्वारा, सभी जिला न्यायाधीशों और अतिरिक्त जिला न्यायाधीशों को, यह अधिकार प्रदान करते हैं,- अपीलों को सुनने के लिए अपीलीय प्राधिकरण के रूप मे, जिनके द्वारा हरियाणा राज्य के उक्त अधिनियम की धारा 4,10,12 और 13 के तहत नियंत्रक द्वारा दिए गए आदेशों के खिलाफ जो उनके संबंधित अधिकार क्षेत्र में प्रयोग किए जा सकें।"

उपरोक्त से यह बहुत स्पष्ट है कि जहां तक धारा 15 की उप-धारा (1) के तहत दायर की जाने वाली अपीलें हैं, वे केवल अधिनियम की धारा 4,10,12 और 13 के तहत नियंत्रक द्वारा दिए गए आदेशों के संबंध में दायर की जा सकती हैं। मान लीजिए, वर्तमान अपील, विद्वत किराया नियंत्रक द्वारा पारित किए गए ऐसे किसी आदेश के अनुसरण में नहीं, अपीलीय प्राधिकरण को दायर की गई थी। लेकिन जैसा कि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है, धारा 18 के तहत अधिनियम के तहत पारित सभी आदेशों को निष्पादित किया जा सकता है जैसे कि यह दीवानी अदालत का आदेश हो।इसलिए, उन्हें क्षेत्र में अधिकार क्षेत्र वाली दीवानी अदालत द्वारा निष्पादित किया जा रहा है। एक बार दीवानी अदालत द्वारा निष्पादित किए जाने के बाद, आवश्यक निहितार्थ यह होगा कि अपील सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत निर्धारित

की जाएगी। इसलिए, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए इसके विपरीत तर्क को विफल होना चाहिए।

(9) उत्तरदाताओं की ओर से अधिवक्ता ने जोरदार तरीके से कहा कि विद्वत अतिरिक्त जिला न्यायाधीश/अपीलीय प्राधिकरण को अपील की अनुमति देने और मामले को रिमांड करने में उचित ठहराया गया क्योंकि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21, नियम 98 और आदेश 21, नियम 103 के तहत, कब्जा दिए बिना भी कोई व्यक्ति अपने कब्जे की रक्षा कर सकता है। अपने तर्क के समर्थन में, विद्वत वकील ने बाबूलाल *बनाम* राज *कुमार और अन्य*[1] के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब आक्षेपकर्ता ने डिक्री के निष्पादन पर आपत्ति जताई है और वह इसमें पक्षकार नहीं है, तो मामले के निर्धारण की आवश्यकता होती है। पैराग्राफ 7 में अदालत ने कहाः–

> "इसलिए, यह स्पष्ट होगा कि उद्देश्य या अपीलार्थी द्वारा उत्पन्न बाधा को हटाने से पहले, आदेश 21, नियम 98 के तहत निर्णय लेने की आवश्यकता है और उस ओर से एक निष्कर्ष दर्ज करने की आवश्यकता है। आदेश को भाग 21, नियम 103 के तहत एक डिक्री के रूप में माना जाता है और यह एक अपील के अधीन होगा। 1976 से पहले, आदेश, सी. पी. सी. के 1976 के संशोधन के तहत, वाद के अधीन था जो सी. पी. सी. के संशोधित प्रावधानों के शुरू होने की तारीख को लंबित हो सकता है। इसके बाद, संशोधित संहिता के तहत, पुराने संहिता के आदेश 21, नियम 63 के तहत मुकदमे का अधिकार छीन लिया गया है। निष्पादन के तहत अचल संपत्ति में आक्षेपक के अधिकार, स्वामित्व या हित के प्रश्न के निर्धारण पर आदेश 21, नियम 98 के तहत निर्णय लेने की आवश्यकता है जो एक आदेश है और आदेश 21, नियम 103 के तहत एक डिक्री है। इस प्रकार, निर्धारित प्रक्रिया अपने आप में एक पूर्ण कोड है। इसलिए, निष्पादन न्यायालय को प्रश्न का निर्धारण करने की आवश्यकता होती है, जब अपीलकर्ताओं ने उन अपीलार्थियों के खिलाफ डिक्री के निष्पादन पर आपत्ति जताई थी जो विशिष्ट निष्पादन के लिए डिक्री के पक्षकार नहीं थे।"

इसी तरह ब्रह्मदेव चौधरी बनाम *ऋषिकेश प्रसाद* जैसवाल *और एक अन्य*[2] *के* मामले

[1] A.I.R. 1996 S.C. 2050
[2] A.I.R. 1997 S.C. 856

में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब कोई अजनबी आपत्ति दर्ज करता है, तो यह आवश्यक नहीं है कि उसे पहले कब्जा देना चाहिए।पैराग्राफ 5 में सुप्रीम कोर्ट ने कहाः–

> "संक्षेप में आदेश XXI के उपरोक्त वैधानिक प्रावधान, एक डिक्री-धारक द्वारा प्राप्त, कब्जे के लिए डिक्री के निष्पादन से संबंधित सभी विवादों को हल करने के लिए एक पूर्ण संहिता निर्धारित करते हैं और जिनके आदेश को निष्पादित करने के प्रयास कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। एक बार एक कथित प्रतिरोध की पेशकश की जाती है, डिक्री से अपरिचित द्वारा और जिसे निष्पादन न्यायालय के साथ-साथ डिक्री धारक द्वारा नोट किया जाता है कि ऐसे अवरोधक के खिलाफ डिक्री धारक के लिए उपलब्ध उपाय केवल आदेश XXI, नियम 97 उप-नियम (1) के तहत है और वह इस तरह के अवरोध को दरकिनार नहीं कर सकता है और पुलिस बल की मदद से आदेश XXI, नियम 35 के तहत कब्जे के लिए वारंट को फिर से जारी करने पर जोर नहीं दे सकता है, क्योंकि वह पाठ्यक्रम डिक्री के लिए कथित अजनबियों की बाधा को हटाने के संबंध में आदेश XXI, नियम 97 के तहत निर्धारित प्रक्रिया को दरकिनार करने के बराबर होगा।एक बार जब इस तरह की बाधा निष्पादन न्यायालय के रिकॉर्ड में हो जाती है, तो यह समझना मुश्किल है कि निष्पादन न्यायालय ऐसे अवरोधक को कैसे बता सकता है कि उसे पहले अधिकार खो देना चाहिए और उसके बाद ही उसका उपाय आदेश XXI, नियम 99, सी. पी. सी. के तहत एक आवेदन दायर करना और अधिकार की बहाली के लिए प्रार्थना करना है।"

एक साल बाद श्रीनाथ और एक अन्य *बनाम राजेश और* अन्य[3] *के मामले* में वर्ष 1976 में सिविल प्रक्रिया संहिता के संशोधन पर ध्यान देते हुए इसी तरह का विचार व्यक्त किया गयाः–

> "पुराने कानून का नियम 100, जैसा कि, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के उपरोक्त पूर्ण पीठ के फैसले में संदर्भित है, नियम 97 द्वारा कवर की गई स्थिति से अलग है। नियम 100 (पुराना कानून) और आदेश 99 (नियम)

[3] A.I.R. 1998 S.C. 1827

(3) A.I.R. 1998 S.C. 1827
(4) A.I.R. 1998 S.C. 2476

के तहत नए कानून में ऐसे मामले शामिल हैं जहां निर्णय-ऋणदाता के अलावा अन्य व्यक्तियों को डिक्री-धारक द्वारा अचल संपत्ति से बेदखल किया जाता है, निश्चित रूप से, ऐसे मामले भी निष्पादन न्यायालय द्वारा तय किए जाने के लिए शामिल हैं।लेकिन यह ऐसे व्यक्ति के नियम 97 के तहत अपनी आपत्ति का निर्णय लेने के अधिकार को विफल नहीं करेगा, जो उसके बेदखल होने या उस मामले से पहले का एक चरण है जहां वह कब्जे में है।दूसरे शब्दों में, जब ऐसा व्यक्ति अधिकार में होता है तो नए कानून के तहत नियम 100 (पुराना कानून) और नियम 99 के तहत निर्णय लिया जाता है।इस प्रकार अपने अधिकार पर अचल संपत्ति का कब्जा रखने वाला व्यक्ति आदेश 21, नियम 97 के तहत निष्पादन कार्यवाही में आपत्ति कर सकता है।फांसी की कार्यवाही में भाग लेने के लिए किसी को अपने बेदखल होने का इंतजार नहीं करना पड़ता है।इससे पता चलता है कि ऐसा व्यक्ति आपत्ति कर सकता है और निर्णय ले सकता है जब उसे डिक्री धारक द्वारा बेदखल करने की मांग की जाती है।उपरोक्त सभी कारणों से, हम श्रीमती में पूर्ण पीठ नहीं पाते हैं। उषा जैन (ऊपर) ने कानून का सही निर्णय लिया।"

घासी राम और अन्य बनाम चैत राम सैनी और *अन्य*[4] *के मामले* में *भी यही विचार व्यक्त किया* गया था कि अधिकार, शीर्षक सहित सभी प्रश्न

[4] A.I.R. 1998 S.C. 2476

और निष्पादन न्यायालय द्वारा संपत्ति में ब्याज पर ध्यान देना होगा।

(10) इस प्रकार, इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि यदि कोई तीसरा व्यक्ति अधिकार *में है* जो प्रामाणिक रूप से अधिकार, स्वामित्व और हित का दावा करता है, तो दायर की गई आपत्तियों में इसका निर्णय लिया जा सकता है। यदि आपत्तियों पर *विचार करने* की आवश्यकता होती है, तो अनिवार्य रूप से एक परीक्षण आगे बढ़ेगा।यदि वे तुच्छ हैं और इसके बावजूद दुर्भावनापूर्ण *हैं, तो* उन्हें खारिज कर दिया जाना चाहिए।जबकि कुछ मामलों में।रुकने से भी इनकार किया जा सकता है।

(11) काजी अकील अहमद बनाम इब्राहिम और अन्र *के मामले में* सर्वोच्च *न्यायालय*[5] *अभिनिर्धारित–*

> "उन्होंने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी संख्या 2 गिरराज के झूठे और काल्पनिक दावे में कोई योग्यता या कोई सार नहीं है कि वह प्रत्यर्थी संख्या 1 के स्वतंत्र रूप से दुकान में एक किरायेदार है जो इस तथ्य से स्पष्ट है कि अपीलार्थी के खिलाफ उनके द्वारा दायर निषेधाज्ञा और घोषणा के लिए मुकदमा 2 नवंबर, 1995 को खारिज कर दिया गया था, जिसकी एक प्रमाणित सच्ची प्रति अंग्रेजी अनुवाद के साथ रिकॉर्ड पर रखी गई है।
>
> XX XX XX XX
>
> XX XX XX
>
> इन तथ्यों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 का दावा कि वह एक किरायेदार है, पूरी तरह से काल्पनिक है और बिना किसी आधार के है और इसी कारण से मुकदमा, 2000 रू के जुर्माने के साथ, खारिज कर दिया गया था। इन तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हम प्रतिवादी संख्या 2 के आवेदन में कोई योग्यता नहीं पाते हैं जो एक बाध्यकारी न्यायालय द्वारा वैध रूप से पारित डिक्री के निष्पादन का विरोध करता है।

[5] 1996 (3) S.L.J. 1697

रॉकी टुरेस बनाम अजीत जैन[6] *के मामले* में *इस न्यायालय* ने इसी दृष्टिकोण को दोहराया और कहाः–

> "इस प्रकार विधि का महत्वपूर्ण सिद्धांत जो निम्नलिखित है, वह यह है कि, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 97 से 108 के साथ पठित धारा 47 के तहत आपत्तियों पर विचार करते हुए एक आक्षेपक को अपना मामला साबित करने का अवसर देने का उद्देश्य कानून या न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने की अनुमति के बराबर नहीं है। ऐसे मामलों में न्यायालय द्वारा विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना चाहिए। यह सत्य है की विवेकाधिकार स्थापित न्यायिक सिद्धांतों द्वारा शासित होता है और इसका प्रयोग कानून के चार कोनों के भीतर किया जाना चाहिए, लेकिन इस तरह के विवेकाधिकार को केवल न्यायिक विवेकाधिकार का नियमित अभ्यास नहीं कहा जा सकता है।किसी भी तरह से यह विषय को नियंत्रित करने वाले अच्छी तरह से स्थापित और स्थापित सिद्धांतों के लिए होना चाहिए।"

यह कि कानूनी स्थिति होने के कारण कोई भी आसानी से मामले के तथ्यों पर वापस आ सकता है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याचिकाकर्ता ने एक बेदखली याचिका दायर की थी जिसमें आरोप लगाया गया था कि वह मकान मालिक है और मामन राम किरायेदार है। मामन राम ने कुछ दलीलें स्वीकार कीं। उन्होंने किरायेदार और मकान मालिक के संबंधों से इनकार किया लेकिन इस दलील को स्वीकार किया कि वह किसी तीसरे व्यक्ति के किरायेदार हैं।विद्वान किराया नियंत्रक ने माना कि पक्षकारों के बीच मकान मालिक और किरायेदार का संबंध होता है।इस प्रकार, इस मामले का निर्णय लिया गया था।इस प्रकार मामन राम के मामले से यह स्पष्ट था कि वह एक किरायेदार के रूप में व्यवसाय में था।उनकी पत्नी सुलोचना देवी अब संपत्ति में अपना अधिकार स्थापित करती हैं।वर्तमान मामले में यह न्यायालय सुलोचना देवी के शीर्षक के बारे में कोई राय व्यक्त नहीं कर रहा है क्योंकि उन्होंने इस संबंध में पहले ही दीवानी मुकदमा दायर कर दिया था।लेकिन तथ्य यह है कि यह मामन राम था जिसके कब्जे में था।निष्पादन में उसके कब्जे में खलल डाला जा

[6] 1998 (2) S.L.J. 1637

रहा है।आपत्तियों में यह नहीं दिखाया गया था कि मामन राम ने कभी सुलोचना देवी को अधिकार दिया था।इस प्रकार, सुलोचना देवी की जो भी उपाधि हो, जहाँ तक अधिकार का संबंध है, उसे मामन राम की उपाधि माना जाना चाहिए। इसलिए आपत्तियों पर आगे सुनवाई की आवश्यकता नहीं है और इन्हें तुच्छ माना जाना चाहिए।यह कहने की *जरूरत नहीं* है कि सुलोचना देवी ने एक दीवानी मुकदमा भी दायर किया था और अंतरिम निषेधाज्ञा को भी अस्वीकार कर दिया गया था।इस प्रकार, यह केवल मामन राम के अधिकार की रक्षा करने का एक विलंबित प्रयास है। लेकिन तथ्यों की समग्रता को देखते हुए, इन निष्कर्षों से कोई बचा नहीं है कि वह मामन राम के कब्जे की रक्षा नहीं कर सकती है। उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए, एक बार आपत्तियां तुच्छ हो जाने पर, वे खारिज किए जाने के योग्य हैं।

(12) इन कारणों से, पुनरीक्षण याचिका की अनुमति दी जाती है और विवादित निर्णय को दरकिनार कर दिया जाता है।इसके बजाय आपत्तियों को खारिज कर दिया जाता है।

(13) हालाँकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि यहाँ कही गई किसी भी बात को श्रीमती सुलोचना देवी के शीर्षक के संबंध में किसी भी अभिव्यक्ति के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए। चूंकि मामन राम के खिलाफ बेदखली के लिए अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष अपील लंबित बताई गई थी, इसलिए इसमें कही गई किसी भी बात को उस संबंध में किसी भी राय की अभिव्यक्ति के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए हैताकि वह अपनी भाषा में इसेसमझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

मंदीप सिंह

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी (Trainee Judicial Officer) Gurugram, हरियाणा